आदिपर्व कथासार

श्रीमहाभारत अठारह पर्ववाला महाग्रन्थ है। उपपर्व की दृष्टि से इसमें सौ उपपर्व हैं। आदिपर्व में १९ उपपर्व, ९३८२ श्लोक हैं। उनके आधार पर आदिपर्व का कथासार दिया जा रहा है।

१. अनुक्रमणिकापर्व

इसमें एक अध्याय तथा २८९ श्लोक हैं। नैमिशारण्य में कुलपति महर्षि शौनक बारह वर्षों तक चालू रहनेवाला (द्वादशवार्षिक) सत्रयाग कररहा था। समस्त महर्षि गण वहाँ बैठे थे। उस समय वहाँ लोमहर्षणपुत्र उग्रश्रवा नामक पौराणिक वहाँ आए। कुशलप्रश्न के बाद ऋषिगण महाभारत कथा सुनने की इच्छा प्रकट की। उग्रश्रवा ने परमात्मा को नमस्कार करके व्यासप्रोक्त महाभारत को कहना शुरु किया।

ध्यानयोग में स्थित व्यास महर्षि ने, प्रत्यक्ष की भाँति सम्पूर्ण महाभारत कथा को देख लिया। उसमें सारा लोकवृत्त, सृष्टि, वेद, धर्म, अर्थ आदि चार पुरूषार्थ, लोकयात्रा दृग्गोचर हुई। व्यास ने संग्रहरूप से तथा विस्तार से सब कुछ कह दिया। तप प्रभाव से अवलोकित महाभारत इतिहास को अपने शिष्यों को उपदेश देने के बारे में व्यासजी सोच रहे थे। इतने में लोकहित चिन्तक ब्रह्मा प्रत्यक्ष हुए। प्रणाम करके व्यास ने महाभारत के विशेषों के साथ साथ अपने मन के सोचविचार बता दिया। काव्यरचना के लिए गणेश को स्मरण करने के लिए कहकर, ब्रह्मा अपने ब्रह्मलोक चले गए।

तदनन्तर व्यास महर्षि ने गणेश का स्मरण किया और वे वहाँ उपस्थित हुए। उन्होंने गणेश से मन ही मन रचना कियें गयें अपने ग्रन्थ का लेखक बनने की प्रार्थना की। यह सुनकर गणेश ने कहा - क्षण भर के लिए मेरी लेखनी न रुकती वैसा कहते तो मैं इस ग्रन्थ का लेखक बन सकता हूँ। व्यास ने भी सोच समझकर लिखने का शर्त रख दिया। गणेश इसे स्वीकार करके लेखक बन गए। इसीलिये व्यासजी बीच बीच में गूढार्थवाले श्लोक कहते थे। उस तरह के श्लोक लगभग ८८०० दिखाई पडते हैं।

इस उपपर्व को संग्रहाध्याय भी कहते हैं। न केवल व्यास महाभारत के कर्ता थे बल्कि भरतवंश के रक्षक भी। उसकी माता सत्यवती के नियोग तथा गाङ्गेय (भीष्म) की इच्छा से कृष्णद्वैपायन ने विचित्रवीर्य की पत्नी अम्बिकादि के गर्भ से तीन कुरुवंशीपुत्र धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर को उत्पन्न किये और अपने आश्रम चले गए। तीनों पुत्रों की (दिवङ्गत) मृत्यु हो जाने के बाद व्यास ने इस लोक में महाभारत का प्रवचन किया। जनमेजय के पूछने पर व्यास ने अपने शिष्य वैशम्पायन को महाभारत सुनाने की आज्ञा दी।

पाण्डुमहाराज अपनी बुद्धि और पराक्रम से दिग्विजय होकर मृगों को मारने के स्वभाव से मुनियों के साथ निवास करते थे। एक दिन उन्होंने रतिकाल में स्थित मृगमिथुन को मारकर शापग्रस्त होकर उस दिन से वन में ही रहते थे। वहाँ रहते समय यम, अनिल, शक्र तथा अश्विनीदेवता के अनुग्रह से पाँच पुत्रों को

पाकर माद्री से संगम करके शापप्रभाव से दिवङ्गत हुए। माद्री भी सहगमन की। महर्षि लोग कुन्ती तथा पाण्डवों को हस्तिनापुर ले आकर वहाँ सौंप दिये। पाण्डव बडे होकर अस्त्र शस्त्र विद्या में कुशल बन गये और द्रौपदी से विवाह कर लिये। अनन्तर धर्मराज ने राजसूय याग किया। पाण्डवों की उन्नति देखकर दुर्योधन ईर्ष्यालु बन गया। द्यूतक्रीडा में पराजित होकर पाण्डव अरण्यवास तथा अज्ञातवास किये। उसकी समाप्ति के बाद भी दुर्योधन ने पाण्डवों को राज्य नहीं दिया। इसलिए कौरव पाण्डवों के बीच में युद्ध हुआ। उसमें कौरव पक्ष का नाश होने पर दुःखित धृतराष्ट्र ने अपनी व्यथा को संजय से कह दिया। (इसे यदाश्रौषपर्व भी कहते हैं। लगभग इसमें ७० श्लोक हैं।) तब संजय उसका निर्वेद दूर करने के लिये स्वर्गस्थ हुए पूर्वकालीन राजाओं के चरित सुनाता है और उपदेश देता है कि काल की महिमा से सब कुछ चलता है।

इस तरह पुत्रशोक से व्याकुल धृतराष्ट्र को विदुर ने समझाया। इस इतिहास के आधार पर व्यास महर्षि ने पुण्यमय उपनिषद्रूप महाभारत को कह दिया। जो श्रद्धा के साथ इसके किसी एक श्लोक के पाद का भी अध्ययन करता है उसका पाप मिट जाता है। इतिहासों में यह श्रेष्ठतम है। कहा गया है कि जो श्राद्ध में भोजन करनेवाले ब्राह्मणों को अन्त में इसे सुनाता है उसके पितृदेवताओं को अक्षय अन्न पान की प्राप्ति होती है।

प्राचीन काल में सब देवताओं ने तराजू के एक ओर चार वेदों को, दूसरी ओर भारत को रख दिया। वेदों की अपेक्षा भारत ही भारी निकला। तब से संसार में महत्त्व तथा गौरव के दोनों गुण हेतु यह इतिहास महाभारत के नाम से कहा जाने लगा। इस तरह महाभारत की निरुक्ति कही गयी।

२. पर्वसंग्रह

इसमें एक अध्याय और ३९६ श्लोक हैं। इस पर्व में शमन्तपञ्चक तथा अक्षौहिणी सेना के प्रमाण को बताकर फिर महाभारत के हर एक पर्व के विषयों का संग्रह किया गया है।

त्रेता और द्वापर की सन्धि के समय क्रुद्ध परशुराम अपने कुठार से इक्कीस बार शत्रु राजाओं का संहार किया। उनके रक्त से शमन्तपञ्चक क्षेत्र में पाँच सरोवर बना दिये। उसी रक्त से पितरों का तर्पण किया। उन सरोंवरों के समीपदेश को शमन्तपञ्चक कहते हैं।

अक्षौहिणी सेना में रथों की संख्या (२१,८७०) इक्कीस हजार आठ सौ सत्तर। हाथियों की संख्या भी इतनी ही बराबर है। घोडों की संख्या (६५,६१०) पैंसठ हजार छः सौ दस। पैदल मनुष्यों की संख्या (१,०९,३५०) एक लाख नौ हजार तीन सौ पचास। कुरुक्षेत्र में कौरव पाण्डव दोनों सेनाओं की संख्या अठारह अक्षौहिणी थीं। सब लोग उस युद्ध में नष्ट हो गये। कुरुपाण्डव युद्ध अठारह (१८) दिनों तक चला। पाण्डव पक्ष में अठारह दिन धृष्टद्युम्न सेनाधिपति था। कौरवपक्ष में दस दिन भीष्म, पाँच दिन द्रोणाचार्य, दो दिन कर्ण तथा आधा दिन शल्य सेनाधिपति थे। शेष आधे दिन में भीम और दुर्योधन के बीच गदायुद्ध हुआ।

उसी दिन रात को अश्वत्थामा अवशिष्ट पाण्डव सैन्य, उपपाण्डव तथा धृष्टद्युम्न शिखण्डि को मार डाला। ये विशेष अठारह पर्वों में, सौ उपपर्वों में बताया गया है।

हरिवंश महाभारत के पूरकग्रन्थ कहते हैं। इसे खिलपुराण भी कहते हैं। इसे जोडकर सौ उपपर्व के रूप में गिनते हैं। जो वेद वेदाङ्गों को जानता है परंतु इस इतिहास को नहीं जानता वह विद्वान नहीं है। इस आख्यान को सुन लेने पर और कुछ सुनना अच्छा ही नहीं लगता। जैसे भोजन के बिना शरीर नहीं रह सकता वैसे इस पृथ्वी पर महाभारत कथा के आश्रय लिये
बिना कोई कथा नहीं है। जो महाभारत पढता है या दूसरों से कथा सुनता है उसे पुष्करजलाभिषेचन की जरूरत नहीं। वेदवेत्ता को कनकशृङ्गमय सौ गायें दान करने से जो फल मिलता है तत्समान फल महाभारत की कथाश्रवण से मिलता है।

३. पौष्यपर्व

इसमें एक अध्याय तथा १८८ श्लोक हैं। इस पर्व में गुरुशुश्रूषा (गुरुजी की सेवा) के बारे में विशेषरूप से बताया गया। महाभारत कथा के बीजभूत सर्पयाग का कारण भी कहा गया।

परीक्षित् के पुत्र जनमेजय अपने भाइयों के साथ कुरुक्षेत्र में दीर्घसत्रयाग का अनुष्ठान करते हैं। देवताओं का कुत्ता सारमेय वहाँ आया। जनमेजय के भाइयों ने उस कुत्ते को मारा। रोता हुआ वह अपनी माँ के पास जाकर सब कुछ बता दिया। पुत्र के दुःख से दुःखी हुई सरमा उस सत्र में आयी और उनसे कहा कि तुमने मेरे निरपाराधी पुत्र को मारा। अतः आप को ऐसा भय उपस्थित होगा, जिसकी पहले से कोई संभावना न रही हो। (भारत में यह पहला शाप है) सरमा के शाप से जनमेजय बहुत दुःखी हो गये। सत्र के समाप्त होने के बाद जनमेजय अपनी शापरूपपापकृत्या को शान्त करने के लिये श्रुतश्रवा नामक ऋषि के पुत्र सोमश्रवा को पुरोहित के रूप में रख लिया। जनमेजय तथा उनके तीन भाई पुरोहित की आज्ञा का ठीक ठीक पालन करने लगे।

उन्हीं दिनों में आयोदधौम्य नामक प्रसिद्ध ऋषि थे। उनके उपमन्यु, आरुणि वेद नामक तीन शिष्य थे। गुरुजी तीनों को कठिन नियमों से परीक्षा करते थे। उसमें कृतार्थ शिष्य का अनुग्रह करते थे। गुरु ने अपने शिष्य अरुणि को केदारखण्ड (क्यारियों की टूटी हुई मेड) बाँधने की परीक्षा दी और उसमें कृतकृत्य उसे अनुगृहीत कर लिया। आयोदधौम्य ने अपने द्वितीय शिष्य उपमन्यु को गायों की रक्षा करने का आदेश दिया और भिक्षा जीवन में कुछ नियम रख दिया। नियम के पालन में वह अन्धा हो गया। तब गुरु ने उससे अश्विनी देवता की स्तुति करवाकर उसका अनुग्रह किया। गुरु की परीक्षा में सफल होकर वेद भी गुर्वनुग्रह प्राप्त कर लिया। उस के तीन शिष्य थे। गुरु के घर में रहने पर छात्रों को जो कष्ट होता उससे वेद परिचित थे। उनके शिष्य उत्तङ्क धार्मिकव्यवहार से गुरु का अनुग्रह प्राप्त किया। अध्ययन के समाप्ति के बाद

उत्तङ्क गुरुजी को गुरुदक्षिणा देने का आग्रह प्रकट किया। उपाध्याय ने अपनी पत्नी से पूछने को कहा। गुरुपत्नी ने पौष्यराजपत्नी से कुण्डल माँग लाने के लिये कहा और आज से चौथे दिन पुण्यकव्रत होनेवाला है। उस दिन उन कुण्डल पहनने की इच्छा प्रकट कर ली। गुरुपत्नी के ऐसे कहने पर वह कुण्डल लाने के लिये पौष्यमहाराज के पास निकला। मार्ग में जाते समय उन्होंने एक वृषभ को और उस पर चढे हुए एक विशालकाय पुरुष को देखा। उस के कहने पर उत्तङ्क ने बैल के गोबर तथा मूत्र को खा पीकर उतावली (संभ्रम) के कारण खडे ही आचमन करके पौष्यमहाराज के पास चला। राजा उसकी पात्रता पर संतुष्ट होकर उसे अपनी पत्नी के पास भेज दिया। उत्तङ्क ने अन्तःपुर प्रवेश किया लेकिन वहाँ राजपत्नी नहीं दिखाई दी। पुनः वह राजा के पास आया। राजा ने उस से कहा कि क्षत्राणी अपवित्र मनुष्य को दिखायी नहीं पडती। यह सुनकर उत्तङ्क पवित्र होकर अन्तःपुर में प्रवेश किया और राज्ञी से कुण्डल पूछ लिया। उस ने कुण्डल दे दिया और कहा कि 'नागराज तक्षक
इन कुण्डलों को पाना चाहता है। इसलिये सावधान से इन्हें ले जाना।' वह महारानी से ऐसा कहकर निकले फिर महाराज से मिले। योग्य ब्राह्मण के मिलने से उसे भोजन के लिये आमन्त्रित किया। उत्तङ्क ने अन्न में बाल देखकर उसे शाप दिया कि 'अपवित्र अन्न देने से तुम अन्धे हो जाओगे।' पौष्यमहाराज ने भी शापके बदले उन्हें अनपत्य होने का प्रतिशाप दिया। दोनों ने शाप के उपसंहार के लिये परस्पर विनति कीं। राजा ने क्षत्रिय होने से शाप का उपसंहार करने में असमर्थ बताया और उत्तङ्क से शाप के उपसंहार की प्रार्थना की, उत्तङ्क ने वैसा ही करके कुण्डलों को लेकर वहाँ से चले गये। रास्ते में तक्षक ने कुण्डलों का अपहरण किया। उसे पीछा करते करते उत्तङ्क ने नागलोक पहुँचकर तक्षक से कुण्डल पाकर एक महापुरुष की सहायता से नागलोक से समय पर आकर गुरुपत्नी को कुण्डल दे दिये।

इस घटना से धर्मतत्पर उत्तङ्क तक्षक के प्रति कुपित हो उससे बदला लेने की इच्छा से जनमेजय के पास जाकर उसे सर्पयाग करने की प्रचोदना की। सर्पयागप्रचोदन ही उदङ्कोपारव्यान का परम प्रयोजन है।

४. पौलोमर्व

इस पर्व में (४-१२) १ अध्याय तथा १७३ श्लोक हैं। यह पर्व सर्पयाग के निमित्त तथा सर्पों के संहरणप्रक्रिया को बताती है। इसमें च्यवन तथा रुरु की कथाएँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। च्यवन की कथा के सन्दर्भ में अग्नि के सर्वभक्षकत्व बताया गया। रुरु तथा प्रमद्वर के वृत्तान्त में अहिंसा के बारे में कहा गया। सूक्तिरत्नों के निधिभूत भारत में 'अहिंसा परमो धर्मः' पहली सूक्ति है। मनुष्य के आवश्यक लक्षणों में प्रथमलक्षण अहिंसा है। सत्य, क्षमा आदि उसके बाद ही गिने जाते हैं। व्यासमुनि ने दर्शितकथा से ज्ञान की सूचना दी।

५. आस्तीकपर्व

इसमें (१३-५८) ४६ पर्व तथा ११९२ श्लोक हैं। जनमेजय के सर्पयाग तथा

बीच में उसकी रुकावट के बारे में शौनक ने उग्रश्रवा से पूछ लिया, तब उसने सर्पयाग के कारणभूत अमृतमन्थन, कद्रू और विनता के चरित तथा परीक्षित् के चरित बताकर याग के विरमण का हेतुभूत आस्तीकचरित कह दिया। इन उपारव्यानों का समाहार ही आस्तीकपर्व है।

साँप के काटने से हुई पिताजी की मृत्यु ही जनमेजय के सर्पयाग का मुख्य कारण है। उस के अमात्य तथा उदङ्क इस विषय को बताकर सर्पयाग करने के लिये जनमेजय को प्रोत्साहन दिया। सर्पयाग रोकने का प्रयत्नों का सारांश ही आस्तीकचरित है।

जनमेजय के पिता परीक्षित् धार्मिकप्रवृत्तिवाले महाराज थे। उनके प्रपितामह पाण्डुराज जैसे वे भी शिकार खेलने में आसक्त थे। एक बार उन्होंने वन में शिकार खेलते घूमते घामते प्यास से व्याकुल होकर शमीक मुनि के पास जाकर बाणाविद्ध होकर कहीं भागा मृग के बारे में पूछा। मौनव्रत पालन करनेवाले मुनि कुछ भी उत्तर नहीं दिया। राजा ने कुपित होकर धनुष की नोक से एक मरे हुए साँप को उठाकर मुनि के कंथे में डाल दिया। शमीक के पुत्र शृङ्गी महातेजस्वी थे। आचार्य की आज्ञा लेकर घर लौटते समय उस के मित्र ऋषिकुमार कृश से अपने पिता के कन्धे पर मृत सर्प रखे जाने की बात सुनकर क्रोध से जल उठा और परीक्षित् को शाप दिया कि आज से सात दिनों में तक्षक नामक विषवाला नाग यमलोक पहुँचा देगा।

ऐसा शाप देकर शृङ्गी पिता के पास आया और उसे सारा वृत्तान्त बताया। पुत्र से दिये गये शाप को जानकर शमीक ने क्षमा गुण की महत्ता का उपदेश दिया और कहा कि 'पुत्र। बिना सोचे तुमने दुष्कर्म किया। राजा हम लोगों से शाप पाने योग्य नहीं है'। शृङ्गी ने पिता की बात नहीं मानी। शमीक ने गोरमुख नामक शिष्य के द्वारा परीक्षित को शापवृत्तान्त की सूचना दी। राजा ने तक्षक से बचने के लिये पूरी व्यवस्था की।

कद्रू नागमाता थी। कद्रू और विनता दोनों कश्यप की पत्नी थीं। अमृतमन्थन के समय क्षीरसागर से उत्पन्न उच्चैःश्रवा नामक घोडे का रंग के बारे में दोनों ने बाजी लगाये। बाजी में विजय पाने के लिये कद्रू ने अपने पुत्रों को अकृत्य करने की प्रोत्साहना दिया। कुछ लोग माता की बात माने। कुछ न माने। बाजी में पराजित विनता कद्रू की दासी बनी। अपनी बात न माननेवाले पुत्रों को कद्रू ने जनमेजय के सर्पयाग में नाश होने का शाप दी। दासी अवस्था में विनता को अरुण और गरुड दो पुत्र पैदा हुए। माता का दासीभाव दूर करने के लिये गरुड ने कोशिश की। कश्यप के वचन से गरुड ने हाथी और कछुए खाकर बलिष्ठ होकर अमरावती से अमृत लाकर सर्पों को दिया और माता को दासीभाव से छुटकारा किया।

माता कद्रू के शाप से बचने के लिए सर्पों ने सोच विचार किया। एलापुत्र नामक नाग के वचन से वासुकि अपनी बहिन जरुत्कारु को जरात्कारु ऋषि ने विवाह किया। उनके पुत्र आस्तीक थे। वह परीक्षित के सर्पयज्ञ को बंद करवाया।

तक्षक से बचने के लिए परीक्षित ने अपने प्रयत्न में लगे हुए थे। तक्षक के विषाग्नि से परीक्षित के बचाने के लिए कश्यप नामक ब्राह्मण हस्तिनापुर की ओर बढे जा रहे थे। तक्षक ने धन देकर उसे लौटा दिया। शृङ्गि के शाप के सातवाँ दिन परीक्षित तक्षक के विषाग्नि से मारे गये।

यह जानकर परीक्षित के पुत्र जनमेजय ने सर्पयाग किया। आस्तीक की प्रेरणा से उसने सर्पयाग रोक दिया। श्री महाभारत में जनमेजय का सर्पयाग प्रमुख स्थान बनता है।

६. अंशावतरणपर्व

इसमें (५९-६४) छः अध्याय तथा ३४३ श्लोक है। इसमें पहले महाभारत का उपक्रम बताया गया। जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने महाभारत की महत्त को सुनाया। उन्होंने कहा कि महामुनि श्रीकृष्णद्वैपायन ने महाभारत नामक इस अद्भुत इतिहास को तीन वर्षों में पूर्ण किया।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के संबन्ध में जो बात स्व ग्रन्थ में है, वह अन्यत्र भी है। जो इसमें नहीं है वह कहीं भी नहीं है।

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।

वैशाम्पायन ने उपरिचर का चरित्र, सत्यवती, व्यास आदी की जन्मकथा, असुरों का जन्म, देवताओं का अपने अपने अंश से जन्म लेना आदि विषय जनमेजय को बताया। सर्पयाग को रोक के जनमेजय ने एक दिन भारतयुद्ध के बारे में व्यासजी से पूछा। उसने वैशम्पायन को सुनाने का आदेश दिया। वैशम्पायन महाभारत की कथा संग्रहरूप से बताया। पराशर तथा
मत्स्यगन्धि सत्यवती दोनों को कृष्णद्वीप में व्यास का पैदा होना भी कह दिया।

७. संभवपर्व

इसमें (६५-१३९) ७५ अध्याय तथा ३५२८ श्लोक हैं। वैशम्पायन ने कुरुवंश के बारे में कहते नहुषपुत्र ययाति की कथा सुनायी। ययाति की दो पत्नियों में शुक्राचार्य की बेटी देवयानी एक थी। उसे यदु और तुर्वसु दो पुत्र थे। शुक्राचार्य के शाप से ययाति तत्काल बूढे हो गये। लेकिन जवानी के भोगों से वे तृप्त नहीं थे। इसलिये अपने बुढापे को लेकर स्व यौवन देने के लिए पुत्रों से विनति की। उनके ज्येष्ठ चार पुत्र यदु तुर्वसु द्रुहयु और अनु वृद्धावस्था लेने का इनकार किये। लेकिन उसके कनिष्ठ पुत्र पूरु ने पिता की विनति को मान ली। विषय उपभोग के पश्चात् ययाति ने अपने पुत्र पूरु को यौवन वापस दे दिया और उसे राज्याभिषिक्त करके तपोवन चले गये। कठोर व्रत का पालन तथा इन्द्रियों का संयम से देवलोक पहुँचे। इन्द्र ने उसे पूछा कि तुम तपस्या में किसके समान हो। उस ने उत्तर दिया कि तपस्या में मेरी बराबरी करनेवाला कोई नहीं है। अहंकार से पुण्य के क्षीण होने पर ययाति का पुण्यलोक में रहने की अवधि समाप्त हो गयी। देवलोक से साधु पुरुषों के समीप गिरने को ययाति की प्रार्थना को इन्द्र ने मान लिया। तदनन्तर नीचे गिरते समय ययाति ने उनके दौहित्र अष्टकादि को

देखा। उनके धर्मसंन्देहों को निवृत्ति करके उनके सांगत्य से फिर ऊर्ध्वलोक चले।

ययाति के कनिष्ठ पुत्र पूरु के नाम से पूरुवंश की ख्याति हुई। उस वंश में इलिल को दुष्यन्त पैदा हुआ। वह एक बार मृगों का शिकार करने वन जाकर वहाँ कण्वाश्रम में मेनका विश्वामित्रों की पुत्री शकुन्तला के साथ गांधर्वविधि से विवाह करके अपना राज्य पहुँचा। कुछ साल के बाद शकुन्तला ने कण्वाश्रम में भरत नामक पुत्र का जन्म दिया। उसके युवराज पद पर अभिषिक्त होने का समय आने पर भी दुष्यन्त ने उन्हें नहीं ले आया। कण्वमुनि ने अपने शिष्यों के द्वारा सपुत्री शकुन्तला को दुष्यन्त का घर भेज दिया। राजसभा में जाकर शकुन्तला ने अपना परिचय दे दिया। लेकिन दुष्यन्त ने अपरिचितव्यक्ति जैसा उस से व्यवहार किया और कहा कि 'मैं तुझे नहीं जानता। निकल जाओ यहाँ से'। निराशा से शकुन्तला वहाँ से निकलने को उद्यत हुई। उतने में अशरीरवाणी यथार्थ को सुनाई। तब दुष्यन्त ने उसे ग्रहण कर लिया। लोकापवाद की भीति से पहले उसे स्वीकार नहीं किया। उनके पुत्र भरत के नाम से भरतवंश की प्रसिद्धि हुई। उस वंश में हस्ति पैदा हुआ। उस के नाम से ही एक देश का नाम प्रसिद्ध हुआ।

कुछ वर्षों के बाद कुरु का जन्म हुआ। उस के नाम से कुरुवंश विख्यात हुआ। उस वंश में राजा प्रतीप को देवापि, शन्तनु तथा बाह्लीक नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए। बचपन में ही देवापि तपोवन गये। शन्तनु राजा बन गया। उस की पत्नी गङ्गा से उत्पन्न पुत्रों को जल में फेंक देती थी। सात पुत्रों को ऐसा किया। पत्नी का व्यवहार राजा शन्तनु को अच्छा नहीं लगता था। आठवाँ पुत्र पैदा होने पर पुत्रहत्या से उसे मना किया। अप्रिय होने से गङ्गा ने पति को छोडकर पुत्र के साथ चली गयी। पुत्र को शास्त्र विद्यापटु बनाकर गङ्गा ने कुछ सालों के बाद ले आकर पिता शन्तनु को सौपं दिया। वही भीष्म था। १) सत्यवती के गर्भ से जो पुत्र पैदा होगा वही राजा बनेगा। २) आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करूँगा इस तरह भीष्म ने दो
प्रतिज्ञा करके अपने पिता शन्तनु और सत्यवती का विवाह कराया। उन्हें दो पुत्र उत्पन्न हुए। बचपन में चित्रांगद एक गन्धर्व से मारे गये। भीष्म ने काशीराज की पुत्रियाँ अम्बिका तथा अम्बालिका के साथ विचित्रवीर्य का विवाह करवाया। बिना संतति विचित्रवीर्य दिवङ्गत हुए। राज्य अनाथ होने की भीति से माँ सत्यवती ने भीष्म को विवाह के लिए प्रचोदित किया। लेकिन उसने प्रतिज्ञाभङ्ग करने को मना कर दिया। तब सत्यवती ने व्यास का चिन्तन किया। क्षणभर में व्यासजी वहाँ प्रकट हो गये। उन्होंने माँ के आदेश का पालन किया। उनसे अम्बिका को धृतराष्ट्र (अन्धा), अम्बालिका को पाण्डुराज (पाण्डुवर्ण) तथा दासी को धर्मवेत्ता विदुर पैदा हुए।

भीष्म के पालन में धृतराष्ट्र तथा पाण्डुराज बडे हुए। धृतराष्ट्र को गान्धारी के साथ, पाण्डुराज को कुन्ती तथा माद्री के साथ विवाह हुआ। दिग्विजय करके पाण्डुराज ने सबको आनन्दित किया। एक बार पाण्डुराज ने कुन्ती तथा माद्री के साथ शिकार के लिए हिमालय के पास गया। वहाँ उसने मैथुनक्रिया में स्थित

मृगमिथुन को बाण से मार डाला। मरते मरते मृग ने उसे शाप दिया कि 'मैथुन में आसक्त होने पर तुम्हें अवश्य मृत्यु होगी'। चिन्तित पाण्डुराज वानप्रस्थ आश्रम लेकर वन में तप किया। कुन्ती तथा माद्री उनकी सेवा करती थी। पुत्रविहीन को स्वर्गप्राप्ति नहीं होने से पाण्डुराज को संतति पर इच्छा उत्पन्न हुई। कुन्ती ने दुर्वास महर्षि द्वारा दिये गये वर के बारे में कह दिया। पति की अनुमति से कुन्ती ने यमधर्मराज से धर्मराज नामक पुत्र को पाया। इसे सुनकर गान्धारी गर्भ धारण करके दो साल होने पर भी प्रसव न होने से बहुत चिन्तित हुई उदर को ताडन करने से और गर्भ से एक मांस का पिण्ड प्रकट हुआ जो लोहे के पिण्ड के समान कडा था। काल के परिवर्तन से क्रमशः उस मांसपिण्ड के एक सौ एक भाग हुए। व्यासजी के उपदेश से घृतपूर्ण सौ कुण्डों में उनकी रक्षा की। उनमें से पहले दुर्योधन का जन्म हुआ। उसी दिन वायुदेव के वर से कुन्ती को भीम उत्पन्न हुआ। फिर एकैक दिन में एकैक दुश्शासनादि कुल सौ पुत्र तथा अन्त में दुश्शका नामक पुत्री पैदे हुए। एक साल के बाद इन्द्र के अनुग्रह से कुन्ती ने अर्जुन को पाया।

एक दिन काममोहित पाण्डुराज ने माद्री से समागम करके शापवश दिवङ्गत हो गये। माद्री ने उस के साथ सहगमन किया। वहाँ के मुनि लोग कुन्ती तथा उसके पाँच पुत्रों को हस्तिनापुर ले जाकर धृतराष्ट्र को सौपँ दिये। उन को आश्वासन दिलाकर व्यास महर्षि ने अपनी माँ सत्यवती तथा अम्बिका, अम्बालिका, तीनों को तपोवन ले गये। वे देवियाँ वन में अत्यन्त घोर तपस्या करके शरीर त्यागकर अभीष्ट गति को प्राप्त किया। पाण्डुपुत्र धृतराष्ट्र के पुत्रों के साथ खेलते कूदते बालक्रीडाओं में समय बिताते थे। भीम की बलशक्ति पर दुर्योधनादि असूयाग्रस्त हो गये। उसका अनिष्ट करने के लिए सदा मौका ढूँढते थे। उसे मारने की इच्छा से उस के भोजन में कालकूट विष डलवा दिया। सोये हुए भीम को लताओं से बाँधकर जल में ढकेल दिया। महाविषधर नागों ने भीमसेन को खूब डँसा। फिर भी उसे कुछ नहीं हुआ।

गुरु कृपाचार्य के पास सभी विद्याभ्यास करते थे। मित्र द्रुपद से तिरस्कृत होकर द्रोणाचार्य हस्तिनापुर आकर कुरुपुत्रों का गुरु बना। विद्याभ्यास में अर्जुन की प्रतिभा देखकर संतुष्ट हुआ और उसे असाधारण अस्त्रशस्त्रविद्याप्रवीण करने का निश्चय किया। अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए उसने गुरुदक्षिणा के रूप में एकलव्य के दाहिने हाथ के अङ्गुष्ठ को ले
लिया। जल में गोता लगाते समय काल से प्रेरित एक बलवान् मकर द्रोणाचार्य की पिंडली पकड ली। अर्जुन ने तीखे बाणों द्वारा पानी में डूबे हुए उस जलजन्तु पर प्रहार किया। द्रोणाचार्य ने बहुत प्रसन्न होकर अनेक प्रकार के अस्त्रों का उपदेश किया। उसने निश्चय किया कि अर्जुन अवश्य द्रुपद को पराजित करके ले आएगा।

द्रोणाचार्य ने कुमारास्त्रविद्याप्रदर्शनी का आयोजन किया। कर्ण ने भी उसमें भाग लेना चाहा। अर्जुन के साथ द्वन्द्वयुद्ध करने के सन्दर्भ में यह प्रश्न उत्पन्न

हुआ कि कर्ण राजकुमार नहीं है। तुरन्त दुर्योधन ने कर्ण को अङ्गदेश के राज्य पर अभिषिक्त कर दिया। उस के बाद अर्जुन ने द्रुपद को पराजित करके बाँधकर उसे द्रोणाचार्य को सौपँ दिया। उसने द्रुपद को अपमानित किया और संतुष्ट होकर अर्जुन को ब्रह्मशिरोनामकास्त्र दिया।

धृतराष्ट्र ने धर्मराज को युवराज पद पर अभिषिक्त किया। पाण्डवों की वृद्धि देखकर धृतराष्ट्र चिन्ताग्रस्त हो गये। उनके पूछने पर अर्थशास्त्र के पण्डित मन्त्रिप्रवर कणिक ने कूटनीति का उपदेश दिया। दुर्योधन भी चिन्ता में पड गया और धृतराष्ट्र के पास पाण्डवों को वारणावत भेज देने का प्रस्ताव रख दिया। उसने पुत्र की विनति मान ली।

८. जतुगृहपर्व

इसमें (१४०-१५०) ११ अध्याय तथा ३२५ श्लोक हैं।पाण्डवों के वारणावत नगर जाने के पहले दुर्योधन ने वहाँ लाक्षागृह बनाने पुरोचन को आदेश दिया। पाण्डव वारणावत को निकले। विदुर ने प्रकारांतर से हितोपदेश किया तो धर्मराज ने उसका अभिप्राय समझ लिया। कुन्ती सहित पाण्डव वारणावत में प्रवेश हुए। विदुर से भेजे गये खनक ने युधिष्ठिर से मिला, और कहा कि दुर्योधन की आज्ञासे इसी कृष्णपक्ष की चतुर्दशी की रात को पुरोचन आपके घर के दरवाजे पर आग लगा देगा। इस संकट से रक्षा करने के लिए खनक ने खाईं की सफाई करने के व्याज से एक बहुत बडी सुरंग तैयार कर दी और उसके मुख को बन्द कर दिया। अतः किसी को ज्ञात नहीं हो पाये। एक दिन रात्रि के समय कुन्ती ने दान देने के निमित्त ब्राह्मण भोजन कराया। परन्तु दैवेच्छा से उस भोजन के समय एक भीलनी अपने पाँच बेटों के साथ भोजन करने आयी। शराब के नशे में बेहोश होकर वह पुत्रों के साथ घर में सो गयी। भीमसेन ने उस जगह जला दिया जहाँ पुरोचन सो रहा था। सुरंग मार्ग से निकलकर कुन्ती सहित पाण्डव सुरक्षित स्थान पहुँच गये। वारणावत के लोगों ने सोच लिया कि पाण्डुपुत्र आग में जल गये। यह समाचार सुनकर धृतराष्ट्र बहुत दुःखी हो विलाप किया। वास्तविक वृत्तान्त से परिचित होने से विदुर ने थोडा शोक मनाया।

वहाँ पाण्डव गङ्गा का पार करके फिर चलने में असमर्थ हो गये। धर्मराज के कहने पर भीमसेन माता कुन्ती तथा भाइयों को अपने ऊपर चढाकर चलने लगे। माता कुन्ती प्यास से पीडित हुई। भीमसेन ने सब को पीपल पेड की छाया में बिठाकर पानी लाने निकला। उस ने पानी पीकर स्नान करके पश्चात् उनके लिये चादर में पानी ले आया। लेकिन थकावट से सब लोग सो रहे थे।

९. हिडिम्बवधपर्व

इस पर्व में (१५१-१५५) पाँच अध्याय तथा २२४ श्लोक हैं। उस वन में नरमांसभक्षक हिडिम्ब नामक रक्षास रहता था। मनुष्य की गन्ध पाकर उसने अपनी बहिन हिडिम्बा को वहाँ जाने को कहा। वह अपने भाई की बात मानकर उस स्थान पर गई जहाँ पाण्डव सो रहे थे। वह वहाँ भीमसेन को देखकर उसे

अपने पति के रूप में कामना की। बहिन को गये बहुत देर होने से उस ने पाण्डवों के पास आया। भीम ने हिडिम्ब को मार डाला। माता कुन्ती की बात मानकर उस ने हिडिम्बा से पाणिग्रहण कर लिया। उस ने सद्योगर्भ में घटोत्कच को जन्म दिया। 'जब मेरी आवश्यकता होगी तब अवश्य आप की सेवा में उपस्थित हो जाऊँगा' ऐसा कहकर राक्षसश्रेष्ठ घटोत्कच उत्तर दिशा की ओर चला गया।

१०. बकवधपर्व

इसमें (१५६-१६३) आठ अध्याय तथा २२० श्लोक हैं। कुन्तीसहित पाण्डव एकचक्रा नगरी में जाकर गुप्त रूप से एक ब्राह्मण के घर में रहकर भिक्षा के द्वाराजीवननिर्वाह करते थे। उस नगरी के निकट के घने जंगल में बक नामक नरभक्षी रक्षास रहता था। वह देश की रक्षा करता था। इसके बदले प्रत्येक गृहस्थ वेतन के रूप में अपनी बारी आने पर शकटपरिमित भोजन, दो भैंसे, और एक मनुष्य को आहार के रूप में देते थे। आज उस ब्राह्मण की बारी आयी जहाँ पाण्डव थे। इसलिये ब्राह्मणकुटुम्ब (पिता माता और कन्या तीनों) फूट फूटकर रोने लगे। विषय जानकर कुन्ती भीम से बातचीत करके उसे राक्षस के पास भेजने का निश्चय करके ब्राह्मण को आश्वासित किया। भीमसेन भोजनसामग्री के साथ बकासुर के पास गया और युद्ध करके उसे मार दिया। एकचक्रनगर के सब लोग खुश हुए।

११. चैत्ररथपर्व

इस पर्व में (१६४-१८२) १९ अध्याय तथा ६८० श्लोक हैं। बकासुरवध के पश्चात् पाण्डव लोग ब्रह्मतत्त्व का अध्ययन करते हुए वहीं ब्राह्मण के घर में रहने लगे। कुछ दिनों के बाद नियमपालनतत्पर एक ब्राह्मण उस ब्राह्मण के घर पर आया। पांचाल देश के राजा द्रुपद का वृत्त सुनाया। उस ने कहा कि द्रुपद महाराज की पुत्री द्रौपदी का स्वयंवर होनेवाला है। मैं वहाँ जा रहा हूँ। यह बात सुनकर कौतुकतावश कुन्ती भी पाण्डवों के साथ द्रुपद की रमणीय नगरी की ओर जाने की तैयारी की। व्यासजी उन से मिलने वहाँ आए। उन्होंने द्रौपदी के पूर्वजन्मवृत्तान्त सुनाया। कहा कि पाञ्चाली पञ्चभर्तृका होगी। उसे पाकर तुम सब लोग सुखी होओगे। व्यास के चले जाने पर पाण्डव अपनी माता को आगे करके वहाँ से पाञ्चाल देश की ओर निकले। रास्ते में अर्जुन ने अङ्गपर्ण से युद्ध करके उसे पराजित किया। बाद को अङ्गपर्ण ने अर्जुन से दोस्ती की। उस ने तपतीसंवरणोपारव्यान के साथ विश्वामित्रचरित तथा वशिष्ठ की महिमा बता दिया। उस की सूचना के अनुसार धौम्य को पुरोहित कर लिया।

१२. स्वयंवरपर्व, १३. वैवाहिकपर्व

स्वयंवरपर्व में (१८३-१९१) ९ अध्याय तथा वैवाहिकपर्व में (१९२-१९८) ७ अध्याय तथा कुल ४५७ श्लोक हैं। पाण्डव ब्राह्मणवेष में द्रौपदीस्वयंवर सभा को निकले। धृष्टद्युम्न ने सभा में घोषणा की कि जो व्यक्ति पाँच बाणों द्वारा ऊपर के यन्त्र के छेद के भीतर से लक्ष्य को बेधकर गिरा देगा मेरी बहिन द्रोपदी उसकी

धर्मपत्नी होगी। लक्ष्य छेदने में राजकुमार असफल हुए।

बिना आयास अर्जुन ने लक्ष्य का छेद करके द्रौपदी का ग्रहण किया और उसे माता कुन्ती के पास ले आया और कहा कि 'माँ हम लोग भिक्षा लाये हैं। उस समय कुन्ती गृह के भीतर थी। उन्हें देखे बिना ही उस ने उत्तर दिया कि तुम सब भाई मिलकर उसे पाओ। पाण्डव द्रुपद मन्दिर को गये। धर्मराज ने द्रुपद से कहा कि हम पांच द्रौपदी से परिणय करेंगे। द्रुपद को धर्मसन्देह हुआ। उस समय व्यास वहाँ प्रत्यक्ष हुआ और द्रौपदी का पूर्वजन्मवृत्तान्त कहकर उसे मनाया। कुन्तीपुत्रों के साथ द्रौपदी का परिणय हुआ।

१४. विदुरागमनराज्यलम्भपर्व

इसमें (१९९-२११) १३ अध्याय तथा ५४० श्लोक हैं। पाण्डव द्रौपदी का परिणय करके एक साल तक द्रुपदपुर में रहे थे। यह समाचार दुर्योधन ने चारों द्वारा जान लिया। पाण्डवों के अभ्युदय पर उस ने असूयाग्रस्त हुआ और शत्रुओं का वश में लाने का उपाय धृतराष्ट्र से कहा। कर्ण ने पराक्रम से उन्हें नष्ट करने का सलाह दी। उनके विचार पर धृतराष्ट्र भी सहमत था। परन्तु उस ने भीष्म द्रोण आदि मन्त्रियों को बुलवाकर उनके साथ विचार किया। भीष्म ने कहा कि 'जैसे गान्धारी के पुत्र मेरे अपने हैं वैसे कुन्ती के पुत्र भी हैं। इसलिये दोनों की रक्षा मुझे करनी चाहिए। इसलिये प्रेमपूर्वक उन्हें आधा राज्य दे दो'। द्रोणाचार्य भी भीष्म की बात पर अपनी सम्मति प्रकट की। विदुर भी उन दोनों के वचनों का समर्थन किया। धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को आधा राज्य देने का निश्चय करके विदुर को भेजकर पाण्डवों को हस्तिनापुर आने की प्रबन्ध की। कृष्ण भी वहाँ आये धृतराष्ट्र ने आधे राज्य देकर धर्मराज को राज्याभिषिक्त किया और उन्हें खाण्डवप्रस्थ जाकर वहाँ रहने का सलाह दी। श्रीकृष्ण के आदेश से विश्वकर्म ने वहाँ इन्द्रप्रस्थपुर का निर्माण किया। पाण्डव वहाँ सुख से रहते थे। एक दिन नारद वहाँ आया और सुन्दोपसुन्द की कथा सुनाकर स्त्री के विषय में पालन करने का नियम बताया। उस के अनुसार द्रौपदी एक एक साल एक एक गृह में रहती। उस समय दूसरों को वहाँ नहीं जाने का भी नियम रखा गया। यदि नियम का अतिक्रमण करते तो तक साल एक तीर्थसेवा करने की प्रतिज्ञा किया।

१५. अर्जुनवनवासपर्व

इस पर्व में (२१२-२१७) ६ अध्याय तथा १७९ श्लोक हैं। पूर्वोक्तरूप से नियम बनाकर पाण्डव लोग खाण्डवप्रस्थ में रहने लगे। कुछ समय के बाद एक दिन कुछ चोरों ने किसी ब्राह्मण की गौएँ चुरा लीं। उसकी विनति पर अर्जुन ने उस के गोधन की रक्षा के लिए धनुष लेने धर्मराज के घर के भीतर पहुँचकर धनुष बाण लिया और चोरों का विनाश करके सारा गोधन जीत लिया। नियमभङ्ग होने से उस ने धर्मराज के तिरस्कार करने पर भी एक वर्ष तक तीर्थयात्रा करने के लिए दीक्षा ली। उन्होंने प्रथमतः गङ्गाद्वार जाकर वहाँ गङ्गा में स्नान करके जल से बाहर निकलते समय नागराज की पुत्री उलूपी ने उसे देखकर आकर्षित हुई और उसे नागलोक ले चली। अर्जुन ने उस की इच्छा को

पूर्ण किया। साथ अर्जुन फिर गङ्गाद्वार आ पहुँचे। वह उन्हें वहाँ छोडकर पुनः अपने घर को लौट गई। सद्योगर्भ में उलूपि ने इरावान् नामक पुत्र को जन्म दिया। फिर अर्जुन ने तीर्थयात्रा करते करते मणिपूर में जाकर चित्राङ्गदा का विवाह करके उसके गर्भ से बभ्रुवाहन नामक पुत्र को पाया। राजा चित्रवाहन की विनति के अनुसार उस पुत्र को वंशप्रवर्तक के रूप में उस के पास छोडकर तीर्थभ्रमण करने चला गया।

१६. सुभद्राहरणपर्व, १७. हरणाहरणपर्व

सुभद्राहरणपर्व में (२१८-२१९) दो अध्याय तथा हरणाहरणपर्व में एक अध्याय है तथा दोनों में कुल मिलाकर १४८ श्लोक हैं। बाद को अर्जुन ने प्रभासतीर्थ चला। गुप्तचर के द्वारा अर्जुन के आगमन को जानकर श्रीकृष्ण मित्र से मिलने के लिए द्वारका से वहाँ गये। दोनों प्रभासतीर्थ में यथेष्ट विहार करके वहाँ से रैवतक पर्वत जाकर उस रात को वहाँ रहकर प्रभात में द्वारका चले गये। कुछ दिनों के बाद यादव उस पर्वत पर उत्सव मनाये। उसमें द्वाराकपुरवासियों ने सोत्साह भाग लिया। रेवती के साथ बलराम भी वहाँ हर्षोन्मत्त होकर विचर रहे थे। वहाँ विचरते समय अर्जुन सुभद्रा को देखकर आकर्षित हुआ और उसे पाने का उपाय श्रीकृष्ण से पूछा। श्रीकृष्ण की अनुमति से उस ने सुभद्रा को ग्रहण करके इन्द्रप्रस्थ ले आया। कुछ वर्षों के बाद उसने अभिमन्यु को जन्म दिया। बाद में द्रौपदी को पाँच उपपाण्डव पैदा हुए। (प्रतिविन्ध्य, श्रुतसोम, श्रुतकीर्ति, शतानीक तथा श्रुतसेन)

१८. खाण्डवदहनपर्व

इसमें (२२१-२२६) छे अध्याय तथा २४८ श्लोक हैं। तदनन्तर कुछ दिनों के बाद गरमी के दिन श्रीकृष्ण और अर्जुन सुहृदों के साथ यमुनातट गये। वहाँ विहार करते करते दोनों पास के किसी अत्यन्त मनोहर प्रदेश में गये। वह खाण्डव वन के समीप में थी। उस समय उनके पास अग्निदेवता आये। उस ने उन से विनति की कि 'श्वेतकि नामक राजा से किये गये शतवार्षिक सत्र याग में अविच्छिन्न आज्य धारा के डालने से उदर में विकार हो गया। उसे दूर करने के लिये खाण्डवदहन ही एकमात्र उपाय है। दाह करते समय इन्द्र से रक्षा कीजिए'। उन्होंने मान लिया। उस समय अग्नि ने अर्जुन को गाण्डीव तथा अक्षय तूणीर, श्रीकृष्ण को सुदर्शनचक्र तथा कौमोदकी नामक गदा दे दिया।

१९. यमदर्शनपर्व

इसमें (२२७-२३३) सात अध्याय तथा २४७ श्लोक हैं श्रीकृष्ण और अर्जुन देवदानव तथा इन्द्र को पराजित करके खाण्डववन को परिपूर्णरूप से जलाकर अग्नि की इच्छा को पूरा किया। पूर्णरूपसे जलाने पर भी उस से अश्वसेन, मय और चार शाङ्र्गक (स्तम्बमित्र, द्रोण, जरितारि, सारिसृक्) बच गये। इन में मय नामक राक्षस ने बाद में धर्मराज को एक सभाभवन निर्माण करके दे दिया।

।। आदिपर्व कथासार समाप्त ।।